VISHVA–JYOTI R. N. NO. 1/57 ISSN 0505-7523
REGD. NO. PB-HSP-01
CURRENCY PERIOD: (1.1.2015 TO 31.12.2017)

६४, १-२ अप्रैल-मई —2015

विश्वज्योति

विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान

साधु आश्रम, होश्यारपुर

एक प्रति का मूल्य : २५ रुपये

Scanned with CamScanner

विषय-सूची

लेखक	विषय	विधा	पृष्ठांक
डॉ. भवानीलाल भारतीय	ऋषि दयानन्द का भक्तिवाद	लेख	2
डॉ. सत्यव्रत वर्मा	भक्ति- 'शास्त्र' की उल्लेखनीय कृति नारदभक्ति सूत्र	लेख	6
डॉ. त्रिलोचनसिंह विन्द्रा	आस्तिकता ही भक्ति की नींव है	लेख	13
महात्मा चैतन्यमुनि	गीता में भक्तियोग	लेख	16
डॉ. सुरेन्द्र पाल	काश्मीरीय शैवदर्शन में भक्ति	लेख	19
डॉ. मोनिका नरेश	उपनिषदों में वर्णित भक्ति	लेख	22
डॉ.(श्रीमती)वसुन्धरा रिहानी	राष्ट्रभक्ति की अप्रतिम प्रतिमा- वीर हकीकत राय	लेख	26
डॉ. आशा मेहता	भक्ति के लाभ	लेख	29
श्री विनोद चन्द्र पाण्डेय 'विनोद'	हिन्दी बाल-काव्य में देशभक्ति की भावना	लेख	32
श्री वीरेन्द्र नाथ भार्गव	भक्तिकाल के प्रवर्तक स्वामी रामानंद	लेख	35
डॉ० सत्यपाल शर्मा	महामानव भक्तशिरोमणि हनुमान	लेख	38
डॉ० सञ्जय कुमार	वाल्मीकीय रामायण में भक्तियोग	लेख	42
श्री ताराचन्द्र आहूजा	मानस में नवधा भक्ति	लेख	46
डॉ. कुलदीप सिंह आर्य	श्रीमद्भगवद्गीता के कर्मोपदेश का महत्त्व	लेख	48
डॉ. विजय कुमारी गुप्ता	हिन्दी में रामभक्ति-साहित्य की प्रवृत्तियाँ	लेख	51
डॉ० रीना तलवाड़	मीरा की भक्ति -भावना	लेख	54
डॉ. कामदेव झा	भक्ति का स्वरूप	लेख	57

Scanned with CamScanner

वाल्मीकीय रामायण में भक्तियोग

– डॉ० सञ्जय कुमार

वाल्मीकीयरामायण भारतीय धर्मदर्शन एवं संस्कृति का आदिकाव्य माना जाता है। इसमें विविध मानव-जीवनोपयोगी तथ्य प्राप्त होते हैं, जिनसे मनुष्य-समाज अपनी आध्यात्मिक उन्नति के चरम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। यहाँ चरम लक्ष्य से अभिप्राय मोक्ष से है। संसार में मनुष्य विभिन्न कष्टों एवं दु:खों को सहन करता हुआ अन्त में उस अनन्त में विलीन होने की कामना करता रहता है, जहाँ उसे विश्वास रहता है कि वहाँ अलौकिक आनन्द की प्राप्ति होगी और यही विश्वास उसे उस आनन्द तक पहुँचाने का माध्यम बन जाता है। विश्वास और भक्ति समानार्थक शब्द हैं। दोनों हमें परम सत्ता की ओर ही प्रवृत्त करते हैं। परन्तु भक्ति वह भाव है जो किसी के गुणों पर लुट जाने को आतुर रहती है। विश्वास में ऐसा नहीं होता। भक्ति हृदय का सहज भाव है। वह अपने इष्ट से इस प्रकार मोहित हो जाती है, जिस प्रकार माँ अपने शिशु पर कुर्बान रहती है। बस अन्तर केवल इतना होता है कि माँ की कामना सांसारिक होती है जबकि भक्त की कामना संसार से ऊपर आत्मज्ञान होती है। भक्ति के संबंध में आचार्य रामचंद्रशुक्ल कहते हैं - ''भक्ति में किसी ऐसे सान्निध्य की प्रवृत्ति होती है जिसके द्वारा हमारे महत्त्व के अनुकूल गति का प्रसार और प्रतिकूल गति का संकोच होता है। इस प्रकार का सामीप्य लाभ करके हम अपने ऊपर पहरा बैठा देते हैं- अपने को ऐसे स्वच्छ आदमी के सामने कर देते हैं जिसमें हमारे कार्य का प्रतिबिम्ब ठीक-ठीक दिखाई पड़ता है।''[1] जिसके कारण वह सदैव अपने को भगवान् के सम्मुख रखकर आत्मलाभ की ओर अग्रसर होता है।

वाल्मीकीयरामायण पग-पग पर भक्तियोग से समन्वित है। उसमें मनुष्य क्या, बन्दर, भालुजाति से भी भक्तियोग की बेजोड़ अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। विभीषण से लेकर भरत, लक्ष्मण, शबरी या स्वयं राम तक में भक्तिभाव का उमड़ता सागर देखकर कछारों पर खड़ा पाठक भावविभोर हो जाता है। यही भक्तिभाव का माहात्म्य है। इस पवित्र भाव के

1. शुक्ल आचार्य रामचन्द्र, चिन्तामणि, पृ. 12

Scanned with CamScanner